IJFANS INTERNATIONAL JOURNAL OF FOOD AND NUTRITIONAL SCIENCES
ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 10, Iss 11, 2021

भारतीय जाति व्यवस्था पर औपनिवेशिक प्रभाव

डॉ. मनीष कुमार
पी.जी.टी. इतिहास, केन्द्रीय विद्यालय,
पीतमपुरा, दिल्ली
ईमेल : manishkvvponda@gmail.com

जाति भारतीय सामाजिक जीवन का एक प्रमुख यथार्थ है। भारतीय इतिहास का अध्ययन करने वाला कोई भी इतिहासकार, समाजशास्त्री, निर्विज्ञानी और यहाँ तक की राजनीतिक अर्थशास्त्री भी इस सच्चाई की उपेक्षा नहीं कर सकता। निश्चित तौर पर यह बात सही है कि भारतीय जनमानस पर जातिगत मानसिकता का प्रभाव गहराई तक है। लेकिन जाति व्यवस्था और जातिगत मानसिकता की बात पर जोर डालते हुए कई बार सामान्य लोगों से लेकर अकादमिक जीवन में रह रहे लोगों तक में इस पहलू को भारतीय समाज और जीवन का एकमात्र सर्वप्रमुख पहलू करार देने का रुझान होता है। विगत कई वर्षों में विद्वानों के बीच इस विषय पर काफी वाद–विवाद हुआ है। बुनियादी तौर पर यह वाद–विवाद उपनिवेशवाद और उसके प्रशासनिक तंत्र के प्रभाव में भारतीय समाज के परिवर्तन पर होने वाली बहस का हिस्सा है। इस बहस में विद्वानों का एक वर्ग पूर्व–औपनिवेशिक सामाजिक संरचनाओं की निरन्तरता के पक्ष में तर्क देते हैं। वहीं विद्वानों का एक दूसरा वर्ग औपनिवेशिक सरकार द्वारा लगाए गए गुणात्मक परिवर्तनों पर जोर देता है।

इस बहस को प्रारंभ करने वालों में सबसे प्रमुख थे लुइस दुमओंट (Louis Dumont), जिनकी पुस्तक होमो हिएरारचीकुस (Homo Hierarchicus) जाति व्यवस्था का अध्ययन करने वाले समाजशास्त्रियों के लिए बाइबिल जैसा महत्व रखती है। चाहें वे उससे सहमत हों य असहमत। इसका एक करण यह भी है कि दुमओंट की आवधारणा काफी तराशी हुई है। उसमे कहीं कोई अंतर्विरोध नहीं दिखता। अलग–अलग अवधारणाएं एक बारीकी से तराशे हुए ढांचे में फिट कर दी गईं हैं। जैसा की पुस्तक के नाम से ही प्रतीत हो रहा है। यह उन लोगों ओर समुदायों के बारे में है जो कि समानता के सिद्धांत को नहीं मानते। दुमओंट के अनुसार–पश्चिम का मनुष्य अपने व्यक्तिवाद के कारण समानता के सिद्धांत में यकीन करता है। लेकिन हर समाज को पदानुक्रम की जरूरत पड़ती है। दुमओंट के अनुसार जब आप जैसे ही किसी मूल्य को अपनाते हैं तब आप वास्तव में एक पदानुक्रम को स्वीकार कर रहे होते हैं। हिन्दू समाज की सबसे बड़ी खासियत यह है कि यह पदानुक्रम सामंजस्यपूर्ण है। इस पदानुक्रम यानि कि जाति व्यवस्था का भौतिक और आर्थिक कारकों से कोई लेना देना नहीं है। जाति व्यवस्था को निर्धारित करने और यहाँ तक कि निर्मित करने वाला तत्व है – कर्मकांडीय पदानुक्रम (Ritualistic Hierarchy)। यही कर्मकांडीय सिद्धांत वह बुनियादी संरचना है जो कि वास्तविकता को निर्धारित कर रही है। ब्राह्मणवादी कर्मकांडीय विचारधारा हिन्दू समाज में सामाजिक यथार्थ का निर्माण करती है। इस विचारधारा का सबसे बुनियादी तत्व है–शुद्धता और अशुद्धता या प्रदूषण के सिद्धांत

के आधार पर एक समूचे सामाजिक पदानुक्रम की रचना करना। जिसमे ब्राह्मण शीर्ष पर है और अस्पृश्य या अछूत सबसे नीचे।

हर जाति अन्य जातियों से अपने संबंधों के आधार पर परिभाषित होती है और नतीजे के तौर पर हमें पदानुक्रम में व्यवस्थित जातियों का एक पूरा ढांचा मिलता है। दुमओंट के पास इस सवाल का जवाब भी है कि शुद्धता और प्रदूषण का विचार कहां से आया है? उनका कहना है कि यह वह मूलभूत मूल्यों की संरचना है जो कि यथार्थ का निर्माण करती है और यह पूर्वप्रदत्त है। ऐसा मूल्य समुच्य हर समाज में होता है। पदानुक्रम एक अनिवार्य मूल्य है। और हर समाज को इसकी जरूरत होती है।

जाति व्यवस्था इस रूप में हिंदू समाज को एक ऐसा पदानुक्रम का ढांचा देती है। जो कि अप्रतिस्पर्धापूर्ण है, सामंजस्यपूर्ण है, अपरिवर्तनीय है और समाज को स्थिर बनता है। इस प्रकार दुमओंट जाति का ब्राह्मणवादी दृष्टिकोण अपना लेते हैं। यह एक प्रकार से जाति व्यवस्था को सही ठहराए जाने के समान है।

निकोलस डिरक्स (Nicolas Dirks) और अन्य विद्वानों ने जाति की इस धारणा को चुनौती दी है। निकोलस डिरक्स ने अपनी पुस्तक 'कॉस्ट ऑफ माइंड' (Caste of Mind, 2001) में यह तर्क दिया है कि जाति औपनिवेशिक आधुनिकता की एक उपज है। वह मानव जाति वर्णनों और ग्रंथों के प्रमाण के सहारे यह बताते हैं कि ब्राह्मण और उनके ग्रंथ भारतीय जीवन के सामाजिक ताने–बाने के इतने केंद्र में नहीं थे कि उनका संपूर्ण जीवन ब्राह्मणी परंपराओं पर निर्भर था। इस विचार के अनुसार मनुष्यों और संसाधनों पर अधिकार और सत्ता–संबंध अधिक महत्वपूर्ण थे। ब्राह्मण तो केवल कर्मकांड विशेषज्ञ थे और अक्सर शक्तिशाली शासक परिवार की अधीनता में रहते थे। पारंपारिक भारत का जाति आधारित धर्म शास्त्रीय एवं ब्राह्मणी नमूना इस विचार के अनुसार अंग्रेज प्राच्यविदों और मानव जाति वेत्ताओं का एक आविष्कार था।

इससे निकोलस डरिक्स का आशय यह नहीं है कि अंग्रेजों के आने से पहले जाति का अस्तित्व नहीं था। वह तो बस यह कहना चाहते हैं कि जाति अंग्रेजी राज्य में एक ऐसी अकेली अंगूठी श्रेणी बनी, जिसने भारत को समझने का एकमात्र सूचक व्यक्त और प्रस्तुत किया। उससे पहले भारत में समुदाय और सामाजिक पहचान की विविध रूप विद्यमान थे। अंग्रेजों ने प्रत्येक वस्तु को जाति की एक अकेली व्याख्यात्मक श्रेणी बनाकर रख दिया। यह औपनिवेशिक राज्य और उसके प्रशासक ही थे जिन्होंने जाति को एक एकरूपी, सर्वांगीण और वैचारिक स्तर पर संगत संघटना का रूप दिया। उन्होंने इसे सभी वस्तुओं का पैमाना और परंपराओं का सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रतीक चिन्ह बना दिया। उपनिवेशवाद ने जाति जैसी सामाजिक संस्थाओं और सांस्कृतिक रूपों का पुनर्गठन किया, और इसके पीछे उनका उद्देश्य यूरोपियन आधुनिकता के पोषकों के रूप में अपने और उपनिवेशित एशियाई पारंपरिक प्रजा के बीच अंतर तथा विभाजन रेखा खींचना था। दूसरे शब्दों में भारतीय परंपरा की पहचान और प्रस्तुति में अंग्रेजी उपनिवेशवाद ने एक अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। औपनिवेशिक आधुनिकता के तथाकथित भारतीय परंपराओं का अवमूल्यन कर दिया। साथ–साथ इसने उन्हें बदल भी डाला। व्यक्तिगत क्षेत्र को नियंत्रित तथा उसमें मध्यस्थता करने वाले भारतीय आध्यात्मिक सार तत्व के रूप में जाति को पुनर्गठित किया गया। जातिग्रस्त भारतीय समाज यूरोपीय नागरिक समाज से भिन्न था। क्योंकि

Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved

जाति तो व्यक्तिवाद के बुनियादी सिद्धांतों और एक राष्ट्र की सामाजिक पहचान के विरुद्ध थी। इस पूर्व औपनिवेशिक पहचान और निष्ठा–बोध की प्रमुखता को आसानी से औपनिवेशिक आधुनिक प्रशासकों के शासन को उचित ठहरने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता था। इस तरह निकोलस डिरक्स के अनुसार यह भारत का औपनिवेशिक शासन ही था, जिसने सामाजिक भिन्नता और समानता को पूरी तरह से जाति के संदर्भ में संगठित किया।

निकोलस डिरक्स और कई सबालटर्ण इतिहासकारों के अनुसार औपनिवेशिक सत्ता ने भारत की जनता के प्रतिरोध को तोड़ने के लिए आर्थिक और राजनीतिक उपायों के अलावा ज्ञान और संस्कृति का उपयोग भी किया। उनके अनुसार तो यह ज्ञान और संस्कृति का उपयोग, आर्थिक और राजनीतिक कारकों से भी अधिक महत्व रखता है। जाति अनेक विचार में उपनिवेशवादियों की निर्मिती बन जाती है।

इस पूरे दृष्टिकोण के साथ दो समस्या है। एक तो यह है कि जब आप यह मानते हैं कि जाति औपनिवेशिक शासकों की निर्माती (Constract) है, औपनिवेशिक ज्ञान का एक नमूना है जो कि भारतीय लोगों पर प्रभुत्व स्थापित करने के लिए तैयार किया गया था तो आप अनकहे तौर पर उपनिवेशवाद के पहले दौर के भारत के प्रति आलोचनात्मक नहीं हो पाते हैं। आप हर गड़बड़ी को प्रबोधन कालीन तर्कणा और आधुनिकता पर थोपकर साम्राज्यवाद, जाति, व्यवस्था, सांप्रदायिकता आदि सभी बुराइयों को औपनिवेशिक शासकों की उपज करार देते हैं और ब्रिटिश पूर्व भारत का जाने अनजाने महिमामंडन कर बैठते हैं। मिसाल के तौर पर निकोलस डिरक्स का मानना है कि उपनिवेशवाद के आने से पहले भी भारत में जाति मौजूद थी, लेकिन वह तमाम सामाजिक पहचानों में से एक थी, लेकिन उपनिवेशवाद ने जाति को एकमात्र प्रभावी पहचान के रूप में निर्मित किया और समूची भारत की आबादी को उसी में श्रेणीबद्ध कर दिया। इसके जरिए पश्चिम में प्राच्य को नीचा दिखाने, सभ्यता के तौर पर हीन बनाने और भारतीय लोगों को पिछड़ा और आदमी दिखने में कामयाब हुए। जाति को भारतीय जनता की नैसर्गिक विशिष्टता के तौर पर पेश किया गया और इसकी निंदा की गई। लेकिन इस पूरे दृष्टिकोण के बारे में यह कहा जा सकता है कि जहां एक ओर उपनिवेशवाद में जाति व्यवस्था को मजबूत करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और जातिगत विभेद को और अधिक धारदार बनाया। वहीं यह भी सच है कि उपनिवेशवाद के स्थापित होने के बाद भी भारतीय समाज में अनेक विविधताएं मौजूद थीं। मिसाल के तौर पर भाषाई और जनजातीय विविधताएं आदि, और उनके आधार पर भी राजनीति होती थी।

दूसरी बात यह है कि उपनिवेशवादियों के प्रभुत्व की परियोजना में राजनीतिक और आर्थिक प्रभुत्व गौण नहीं था बल्कि भारतीय समाज पर शासन करने के लिए उसे जानने के जो प्रयास उपनिवेशवादियों ने किया किए वे उसी राजनीतिक और आर्थिक प्रभुत्व को संभव और ज्यादा असरदार बनाने के लिए किए गए थे। यह कोई साजिश नहीं थी। वास्तव में उपनिवेशवादियों का यह मानना था कि भारत पर बेहतर तरीके से शासन करने के लिए भारत को जानना आवश्यक है। इसीलिए 1784 में विलियम्स जॉन्स द्वारा एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना से ही यह प्रक्रिया शुरू हो गई थी और बाद तक जारी रही।

Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved

हम यह जरूर कह सकते हैं कि अंग्रेजों को अपने इस प्रयास में सफलता और असफलता दोनों का ही सामना करना पड़ा और वे भारत को पूरी तरह या सही तरीके से समझने में कामयाब नहीं हो पाए, लेकिन उनकी असफलता को सचेतन साजिश और निर्मति का नाम देना, जबरन उत्तर आधुनिकतावादी उत्तर–औपनिवेशिक सिद्धांत और प्राच्यवाद के आधुनिकता–विरोध और प्रबोधन–विरोध को भारतीय इतिहास पर थोपना है। सुशांन बेली ने अपनी पुस्तक "कास्ट सोसाइटी एंड पॉलिटिक्स इन इंडिया फ्रॉम 18जी सेंचुरी टू द मॉडर्न वर्ल्ड" में अपने दृष्टिकोण से निकोलस डिरक्स की सोच की आलोचना की है और कहा है कि ब्राह्मणवाद और उसका वर्चस्व उपनिवेशवाद की पैदावार नहीं थे। हालांकि वे इससे मजबूत जरूर हुए। औपनिवेशिक ज्ञान के निर्माण में भी इन ब्राह्मणों ने आवश्यक भूमिका निभाई और इस पूरी औपनिवेशिक प्रक्रिया में औपनिवेशिक राज्य और देशी कुलीनों के बीच के आपसी सहयोग को देखा जा सकता है। देशी कुलीन और सामंती वर्गों और औपनिवेशिक सत्ता के बीच का सहयोग कोई कल्पना या निर्मिती नहीं था। एक यथार्थ था इसलिए अपने देशवादियों द्वारा किए गए जाति संबंधी अध्ययनों को षड्यंत्र के तौर पर पेश करना और प्राच्य मासूमियत को पैसिव विक्टिम के तौर पर दिखलाने का प्रयास व्यर्थ हैं।

Reference

1. Castes in India, Their Mechanism, Genesis and Development, (n.d.). Retrieved, October 22, 2023 from http://piketty.pse.ens.fr/files/Ambedkar1916.pdf
2. Cannon, G, 'Sir William Jones and the Association between East and West', Proceedings of the American Philosophical Society, Vol. 121, No.2, April 1977
3 Dalmia, V, Stietencron, H. V, Representing Hinduism: The Construction of Religious Traditions and National Identity, Sage Publications, London, 1995
4. Dirks, N.B. The Invention of Caste: Civil Society in Colonial India, CSST Working Paters, The University of Michigan, October 1988
5. Orientalism and religion, Richard King, Routledge, London, 2006
6. Bayly, Susan, Caste society and politics in india from the 18th century to the modern age, Cambridge University Press, 1999
7. Driks, N. B, Castes of Mind, Princeton University Press, 2001